हिन्दी के दरिया साहब : दो सन्त कवि

□ डॉ० सत्यपाल श्रीवत्स

हिन्दी के मुसलमान कवियों में सन्त दरिया साहब नाम से दो मुसलमान सन्त कवि हो गुजरे हैं । दोनों का हिन्दी सन्त कवियों में अपना विशिष्ट स्थान है । इनमें से एक बिहार में पैदा हुए थे जबकि दूसरे दरिया साहब मारवाड़ निवासी थे । इन दोनों सन्त कवियों का समय भी लगभग एक ही है ।

इन कवियों के साहित्यिक क्षेत्र में आने के समय भारत की राजनैतिक, सामाजिक तथा धार्मिक अवस्था अत्यन्त शोचनीय थी । औरंगजेब की कट्टर-धार्मिक नीति से मुग़ल साम्राज्य की नींव हिल चुकी थी तथा इसी दुर्नीति के कारण कबीर, जायसी, रहीम जैसे मुसलमान सन्त कवियों के प्रयत्नों के बावजूद हिन्दू तथा मुसलमानों में फिर फूट के बीज बोए जा चुके थे । परिणामत: अंग्रेज़ी कम्पनी भारत में धीरे-धीरे अपने पांव पक्के कर रही थी । उधर नवाब सिराजुद्दौला घर की फूट का शिकार हो कर प्लासी के युद्ध में पराजित हो चुका था । इसी कारण बंगाल तथा बिहार का जनसाधारण बड़ी निस्सहायावस्था का अनुभव कर रहा था ।

ऐसे तनावपूर्ण वातावरण से सन्त दरिया साहब झुंझला उठे थे । उनमें अपने समकालीन समाज की दुर्दशा सहन नहीं हो रही थी । परिणामतः जिस निर्भीकता से समाज-सुधार का काम अपने समय में सन्त कबीर, गुरु नानक तथा सन्त कवि रहीम ने किया था वही काम करने का सन्त दरिया साहब ने भी बीड़ा उठाया । इनकी वाणी तथा आध्यात्मिक विचारों पर यद्यपि सन्त कवियों का अधिक प्रभाव था, परन्तु बौद्धमत ने इन्हें विशेष रूप से प्रभावित किया था ।

इन्होंने यद्यपि अपना कार्यक्षेत्र बिहार राज्य तक ही सीमित रखा, परन्तु इनकी वाणियों का प्रभाव पड़ोसी राज्यों पर भी विशेष रूप से पड़ा, वैसे सम्पूर्ण भारत ही इनसे आंशिक रूप से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका । इन्होंने बड़ी गम्भीरता, संयम तथा समन्वयात्मक भावना से समाज सेवा का व्रत लिया । इनके द्वारा प्रचारित शान्ति, प्रेम तथा

सत्य के पाठ से जन-साधारण के मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। यह धीरे-धीरे बिहार के सन्तों के मध्य महान् आध्यात्मिक शक्ति बन गए एवं सन्त-साहित्य में भी इनका नाम आदरणीय स्थान प्राप्त करने लगा। गीत गोविन्द की कोमल-कान्त पदावलियों के अमर गायक सन्त जयदेव ने जिस प्रेम-प्रधान सन्त परम्परा का प्रवर्तन किया था यह भी उसकी ही एक कड़ी माने जाते हैं।

इनकी नि:स्वार्थ तथा निष्पक्ष समाज-सेवा के कारण यह समाज के सभी वर्गों के लोगों में आदर पाने लगे। इनके आध्यात्मिक ज्ञान के प्रकाश ने लोगों के अज्ञान रूपी अन्धकार को दूर करने का सराहनीय कार्य किया। वस्तुत: इन के कार्य का मुख्य उद्देश्य भी दुखी समाज को आध्यात्मवाद का सन्देश देना था।

इनके पूर्वज उज्जैन के क्षत्रिय थे। तत्कालीन राजनीति का शिकार होकर उन्हें बिहार आना पड़ा था। वहां वह जगदीशपुर राज्य में बस गए थे। इन के पिता पृथु देवसिंह को अपनी समकालीन राजनीति का शिकार होकर मुस्लिम धर्म स्वीकार करना पड़ा था। उन्होंने अपना नाम पीरन शाह रख लिया तथा औरंगजेब की बेगम की दरजिन की पुत्री के साथ विवाह कर लिया। धरकन्धा नामक स्थान में सम्वत् 1981 में प्रथम दरिया साहब का इनके घर जन्म हुआ था।

दरिया साहब को कबीर का अवतार माना जाता है। इन्होंने अपनी वाणियों में यत्र-तत्र इस बात की पुष्टि भी की है कि यह अपने पूर्व जन्म में भक्त कबीर थे। एक किंवदन्ती के अनुसार इन्हें एक माह की अवस्था में फ़क़ीर दरया शाह के दर्शन हो गए थे। एक अन्य किंवदन्ती के अनुसार बाल्यावस्था में एक दिन जब यह अपनी मां की गोदी में बैठे थे तो इनको एक दिव्य तथा अलौकिक पुरुष के दर्शन हुए थे जिससे इनकी ज्ञान-ज्योति जागृत हो गई थी। इनकी वैराग्य के प्रति गहरी रुचि देखकर इनके पिता ने इनका विवाह नव वर्ष की अल्पायु में ही कर दिया था, परन्तु इनका मन वैवाहिक जीवन से सन्तुष्ट नहीं था। इसीलिए इन्होंने गृहस्थ जीवन में रहते हुए भी अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करके एक नये आश्चर्य को जन्म दिया था। गृहस्थ में रहते हुए भी इन्होंने पन्द्रह वर्ष की आयु में वैराग्य-व्रत की दीक्षा ले ली थी। बीस वर्ष की आयु तक पहुंचते-पहुंचते इन में एक अद्भुत आध्यात्मिक शक्ति जागृत हो गई। फिर क्या था उनकी ख्याति दूर-दूर तक फैल गई। जन साधारण क्या बड़े-बड़े सन्त और महात्मा भी इनके पास जिज्ञासु-भाव से आने लगे तथा इन के सत्संग से लाभान्वित होकर आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने लगे। तीस वर्ष की अवस्था में इन्होंने दरिया सम्प्रदाय की गद्दी पर बैठ कर अपने जिज्ञासु शिष्यों को आध्यात्मिक उपदेश देना आरम्भ कर दिया। उस समय एक महान् सन्त के रूप में इनकी प्रसिद्धि दिनानुदिन सर्वत्र फैलने लगी थी। अपने पूर्ववर्ती मुसलमान सन्त कवियों तथा कबीर द्वारा बतलाये गये समन्वय-मार्ग की ओर समाज को प्रवृत्त करने का आपने प्रशस्य कार्य किया। आप ने भी जात-पात तथा दलीय क्षुद्र भावना से ऊपर उठकर लोगों को सन्मार्ग का उपदेश दिया तथा हिन्दी के सन्त साहित्य की श्रीवृद्धि करने में उन्हीं के समान सराहनीय कार्य करके अपना नाम अमर कर लिया।

इन के सदुपदेशों के प्रभाव से इनके शिष्यों की संख्या दिन-दिन बढ़ने लगी। इनके प्रधान शिष्य छत्तीस ही थे। इनके शिष्य तथा अनुयायियों को केवल एक हुक्का जिसे इनके सम्प्रदाय में "रखना" कहते हैं तथा एक पानी पीने के लिए "मरूका" रखना पड़ता है। ये

दोनों वस्तुएं मिट्टी की होनी चाहिए। इससे इनके पंथ की त्याग भावना तथा निस्पृहनीयता स्वत: ही स्पष्ट हो जाती है जिसका सानी शायद ही कोई अन्य पंथ रखता हो। अत: इनका पंथ अपना उपमान स्वयं है।

जनसाधारण में अपनी जड़ें पुख्ता करके दरिया पंथ धीरे-धीरे राजघराने तक पहुंच गया। बिहार के सूबेदार नवाब मीर क़ासिम ने इनकी आध्यात्मिकता से प्रभावित होकर इन्हें धरकन्धा में ही 101 बीघा भूमि दे दी थी। यहीं पर इन्होंने अथक परिश्रम से लोक कल्याण के लिए अनेक कार्य किए तथा मोक्ष प्राप्ति के लिए कठिन साधना की।

सन्त कवि फरीद, भक्त कबीर, सन्त सज्जन तथा मलिक मोहम्मद जायसी आदि के समान इन्होंने भी हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि में सराहनीय योगदान दिया तथा यह भी उनके समान जात-पात तथा दलीय क्षुद्रभावनाओं से सर्वथा दूर थे। आधुनिक युग में रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, महात्मा गान्धी जैसे समाज सुधारक सन्तों ने जिस सादा जीवन तथा त्यागभावना का उपदेश लोगों को दिया उसका आरम्भ दरिया साहब ने आज से चार सौ वर्ष पहले ही कर दिया था।

यद्यपि दरिया साहब पर सूफीमत तथा "सत्त नामी" सम्प्रदायों का प्रभाव भी था, परन्तु सन्त कबीर की कविताओं की इन की बाणियों पर अमिट छाप पड़ी है। इस विषय में नीचे उद्धत दोहा उल्लेखनीय है :—

"सोई कहो जो कहहि कबीरा।
दरिया दास पद पायो हीरा।"

यह होने पर भी दरिया साहब सन्त कबीर के अन्धानुयायी नहीं थे। इनकी अपनी स्वानुभूति, गहन चिन्तन तथा उन्नत आध्यात्मिक शक्ति इनकी गहन तथा निरन्तर तप: साधना का ही परिणाम था। कबीर जिसे सत्तलोक कहते हैं, दरिया साहब उसे ही छपलोक, अमरलोक तथा अभयलोक बतलाते हैं। वेदान्त के अनुसार यही छपलोक ब्रह्मलोक है। वहां पहुंचने के लिए साधक को कठिन साधना करनी पड़ती है। इनके मतानुसार साधक उस लोक में पहुंच कर ब्रह्मानन्द की प्राप्ति करता है। वहीं पर सत्त पुरुष का निवास है। उसकी कृपादृष्टि होने पर ही वहां पहुंचा जा सकता है—

"तीनि लोक के ऊपरे, तहं अभयलोक विस्तार।
सत्त पुरूष परवाना पावै, पहुंचे जाये करार॥"

इन्होंने अपनी रचना 'ज्ञान-स्वरोदय' में एक स्थान पर कहा है कि वह स्वयं अभयलोक से ही आए हैं। वह अभयलोक ब्रह्मादि देवों तथा समुद्र तथा गंगा नदी की पहुंच से भी परे हैं। स्वर्ग तथा पाताल की परिधि से वह लोक बाहिर है :—

"नहिं तहं सरिता समुद्र न गंगा, ग्यान के गमि उजियारी।
नहिं तहं गनपति, फनपति ब्रह्म, नहिं तहं सृष्टि संवारी॥
सरग पताल मृत लोक के बाहर, तहवां पुरुष भवारी।
कहै दरिया तहं दरसन सत है, सन्तन लेहु विचारी॥"[1]

---

1. तुलना—श्रीमद्भगवद्गीता "न तद्भासयतेभानुर्नशंशाको न पावक: यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्दाम परमं मम।"

परन्तु उस अभय लोक की प्राप्ति सन्त शब्द के ज्ञान के बिना कभी सम्भव नहीं :—

"सन्त शब्द जिसके बल जाना।
अभय लोक सो सन्त समाना ॥

उक्त अभयलोक के निवासी ब्रह्म की खोज के किए दरिया साहब भी सन्त कबीर तथा नानक देव आदि सन्तों के समान किसी मन्दिर, मस्जिद आदि में जाने का उपदेश नहीं देते बल्कि उसे अपने भीतर ही खोजने पर बल देते हैं—"खोजो जीब ब्रह्म मिलि जाई"[1] इन्होंने उस परम ब्रह्म परमात्मा को एक स्थान पर "अद्वैवृक्ष" (अक्षय वृक्ष) भी कहा है। जहां सन्त रामानन्द "सरगुन निरगुन नहीं कुछ भेदा" कह कर ब्रह्म के सगुण तथा निर्गुण रूपों में अभेद सिद्ध करते हैं वहां दरिया साहब का ब्रह्म इन दोनों रूपों से सर्वथा भिन्न है— "निरगुन सरगुन ते भीना" इतना ही नहीं वह आदि, जनादि तथा अगोचर है :—

"आदि जनादि मेरा साई।
दृष्टि न मुष्ट है अगम अगोचर।
यह सब माया, उनकी भाई।"

कबीर, नानक देव जैसे महान् सन्तों के समान सन्त दरिया साहब भी जीव मात्र को उसी विराट शक्ति का अंश मानते हैं। परन्तु आपका विश्वास है कि जब तक तन-मन का पूर्ण समर्पण न कर दिया जाए तब तक अध (पाप) को समाप्त करके उस निरगुण, तथा निराकार के पास पहुंचा ही नहीं जा सकता तथा जब तक निरन्तर निश्छल भाव से राम नाम का स्मरण न किया जाए तब तक समर्पण की भावना जागृत ही नहीं हो सकती। इसलिए नाम स्मरण के बिना तो इसी संसार में उलझे रहना पड़ता है :—

"हंस नाम अमृत नहि चाखेव, नहि पाये पैसार।
कह दरिया जग अरूझेव, इक नाम बिना संसार।"

दरिया साहब की भाषा और शैली :—

दरिया साहब की वाणियों में ब्रज, अवधी, भोजपुरी, फारसी, अरबी तथा संस्कृत के शब्द मिलते हैं। विद्वानों के अनुसार दरिया साहब के द्वारा विभिन्न भाषाओं तथा शब्दावलियों का प्रयोग किए जाने के कारण उनकी भाषा भी सन्त कबीर के समान सधुक्कड़ी भाषा कहलाती है और इसी कारण से उनकी शैली भी अपनी पृथकता कायम किए हुए है। इसके अतिरिक्त इन्होंने फारसी और संस्कृत में भी एक-एक पुस्तक लिखी है। फारसी में लिखी गई इनकी रचना का नाम "दरियानामा" है जबकि इनकी संस्कृत रचना का नाम 'ब्रह्म चैतन्य" हैं। इनके ज्ञान-स्वरोदय, प्रेम-मूल, दरिया-सागर, भक्तिहेत, ज्ञान-रत्न, विवेक-सागर, ज्ञान-दीपक आदि चौदह ग्रन्थ-रत्न हिन्दी में रचे हुए हैं। इनकी सभी रचनाओं में निराकार तथा निर्गुण ब्रह्म की महिमा, माया की निन्दा, संसार की निस्सारता, जीवात्मा और परमात्मा का अभेद सम्बन्ध, परम ब्रह्म का स्वरूप तथा मुक्ति प्राप्ति के लिए की जाने वाली

---

1. तुलना—महादेवी—(क) क्या पूजा क्या अर्पन रे,
उस असीम का सुन्दर मन्दिर,
मेरा लघुतम जीवन रे।

तपः साधना की विधियां आदि विषयों का वर्णन बड़े ही सरल ढंग से किया गया है। यद्यपि कबीर के समान इनके द्वारा भी खण्डन-मण्डन की पद्धति अपनाने के कारण इनकी भाषा में भी कहीं-कहीं भाषा में रूखापन आ गया है तो भी अपने पूर्ववर्ती सन्त कवियों ने जो समन्वयात्मक मार्ग की परम्परा चलाई थी दरिया साहब ने उसे आगे ले जाने का सराहनीय कार्य किया था।

इनकी रचनाओ में इनकी वाणी इनके निजी अनुभव तथा स्वानुभूति की स्पष्ट छाप है। इन्हें पढ़ते-पढ़ते पाठक के मन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इनकी जादुई वाणी के प्रभाव से ही इनके जीवन काल में इनके हजारों शिष्य बन गए थे।

इनकी वाणियों में अनुप्रास, यमक, स्वभावोक्ति, विशेषोक्ति, अन्योक्ति, विभावना, रूपक, विरोधाभास आदि अलंकारों की छटा देखने योग्य है। ये सभी अलंकार इनकी रचनाओं में बड़े ही स्वाभाविक रूप से प्रयुक्त हुए हैं। आकर्षक प्रतीकों के सृजन में तो दरिया साहब को आश्चर्य जनक सफलता प्राप्त हुई है।

कबीर आदि सन्त कवियों के समान दरिया साहब ने भी अपनी वाणियों में अलौकिक प्रेमतत्त्व की महिमा का गान किया है। कबीर के समान दरिया साहब भी ज्ञान को प्रेम के बिना कोई महत्त्व नहीं देते हैं। इस पद्य में उन्होंने ज्ञान और प्रेम का महत्त्व एक साथ स्पष्ट किया है :—

"सोभा अगम, अपार, हंस बंस सुख पा वहीं।
कोई ज्ञानी करै विचार, प्रेम तत जाके बसे ॥"[1]

इस पद से स्पष्ट हो जाता है कि आपके भी-चिन्तन के मूल में प्रेम-भावना ही प्रधान है। आपके पर-ब्रह्य साध्य हैं। आपका पक्का विश्वास है कि प्रेम भक्ति की उद्भावना के बिना भवसागर से पार उतरना असम्भव है।

"कह दरिया एक नाम है, भिरथा यह संसार।
प्रेम-भक्ति जब उपजै, उतरि जाय भवपार।"

इस पद्य में सन्त दरिया साहब प्रेम-भक्ति के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए इस तथ्य पर बल देते हैं कि जब तक साधक में प्रेम-भक्ति उजागर नहीं होती है तब तक भवसागर से पार उतरना असम्भव है।

सन्त कबीर के समान सन्त दरिया भी ब्रह्य-ज्ञान की प्राप्ति के लिए गुरु-कृपा को अनिवार्य समझते हैं। इनके मत से भी गुरु-कृपा के बिना मोक्ष प्राप्ति असम्भव है। गुरू रूपी जहाज पर चड़े बिना इस माया रूपी अगम जल वाले भवसागर से पार उतरना असम्भव है। इस जहाज पर चढ़ कर जब हंस (आतमा) भव सागर को पार करता है तो उसे सुखराज (परमधाम जहां पर आनन्द ही आनन्द है) प्राप्त होता है—

"दरिया भवजल अगम है, सतगुरू करहु जहाज।
तेहि पर हंस चढ़ाई कै, जाई करहु सुखराज ॥"[2]

---

1. देखिए कबीर
2. कबीर।

सन्त कबीर के समान दरिया साहब भी आत्मा को प्रेयसी या पत्नी तथा परमात्मा को प्रेमी या पति मानते हैं :—

"मैं कुलवन्ती खसम पियारी, जां चन तूलै दीपक बारी।
गंध-सुगंध थारि भरिलीना, चन्त न चरिचित आरति-कीन्हा।
फूलन सेज सुगन्ध बिछायौ, आपन पिया गयौ ढायौ।
सेबन चरन रैनि गई बीती, प्रेम-प्रीति तुम ही सो रीती॥"

यह होते हुए भी इन्होंने भी कबीर के समान साखियों की रचना की है।

आपकी एक मात्र संस्कृत रचना "ब्रह्म-चैतन्य" की संस्कृत भाषा यद्यपि व्याकरण की दृष्टि से त्रुटिपूर्ण है तो भी इसके पद स्वाभाविक कवित्व तथा अर्थ गाम्भीर्य से पूर्ण होने से विद्वानों में समादृत हैं। इस विषय में नीचे उद्धृत उदाहरण द्रष्टव्य है—

"पर ब्रह्म परचिन्त परई प्रगासम्।
कायम् न क्रोधम् न माया न साधम्॥

इसी प्रकार इनकी फारसी रचना "दरिया-नामा" के पदों में भी कहीं-कहीं व्याकरण की अशुद्धियां भी कविता के अन्य गुणों के कारण क्षम्य हैं। इस उदाहरण से यह तर्क स्पष्ट हो जाता है :—

"अये दरिया जे तो बैरूं या के नीस्त।
तु हस्ती हर चै हस्ती रा शके नीस्त॥"

इनकी कुछ रचनाओं की अवधी-प्रधान हिन्दी पंजाबीपन लिए हुए अरबी तथा फारसी शब्दावली से प्रभावित है, तथा कुछ रचनाओं की अवधी-प्रधान हिन्दी संस्कृत शब्दों के तत्सम तथा तद्भव रूपों में समन्वित है। इन दोनों विधाओं के उदाहरण क्रमशः इस प्रकार हैं :—

(क) जरबक्स जरबक्स जरबुन्द जर बुन्द।
दिल जांक दिजांक रब पावन्दा रे।
करद दान कदर दान फरामोस फरामोस।
यह गैब का फूल अरि-आवन्दा रे॥

(क) खेउ विरंचि चित्र बहु भान्ति।
त्योह सोहागिन पिया रंग राती॥"

दरिया साहब ने अपनी भाषा को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए लोकोक्तियों तथा कहावतों का भी प्रयोग किया है। जैसे :—

(क) प्रेमगली अति सांकरी।

(ख) चेला बाहिर गुरु है अन्धा।

(ग) पन्थन थकि पथिक थकि गउऊ॥

आज इनके पंथ की जो चार गद्दियां अत्यन्त प्रसिद्ध हैं, उनके नाम इस प्रकार हैं—मिरजापुर (छपरा), मनुवां चौकी (मुजफ्फरपुर), तेलता तथा दंशी (बिहार)।

अभयलोक में आरोहण करने से पहले इन्होंने अपने अन्यतम शिष्य गुणीदास को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर दिया था।

संवत् 1837 की भाद्रपद महीने की कृष्ण चतुर्थी के दिन दरिया साहब ने अपना पार्थिव शरीर छोड़कर छपलोक को प्रस्थान किया था। इस विषय में दरिया-सागर में इस प्रकार उल्लेख आता है :—

भादों वदी चौथ बार शुक्र, गवन कियो छपलोक।
जो जन शब्द विवेकिया, मेटेउ सकल शोक।
संवत् अठारह सौ सैंतीस, भादों चौथ अधार।
सवा जाम जब रैनिगो, दरिया गौन विचार॥

दूसरे दरिया साहब मारबाड़ के रहने वाले थे। इनका जन्म जैंवारन गांव में सं० 1733 में हुआ था। इनके पिता एक साधारण धुनियां थे जैसा कि इनके इस पद से स्पष्ट है :—

"जो धुनियां तो भी मैं राम तुम्हारा।
अधम कमीन जाति मतिहीना, तुम तोहौ सिरताज हमारा।"

इन्होंने गुरू श्री प्रेमदयाल जी से दीक्षा ली थी। कुछ विद्वानों का मत है कि इनकी वाणियों पर सन्त दादू दयाल का प्रत्यक्ष प्रभाव तो है ही, परन्तु यह भी बिहार वाले दरिया साहब के समान अपेक्षाकृत सन्त कबीर से ही अधिक प्रभावित थे। इन्होंने भी साधना में नाम स्मरण पर अधिक बल दिया है। इनका विश्वास है कि यदि साधक निरन्तर निश्छल भाव से नाम स्मरण करे तो एक समय ऐसी अवस्था आ जाती है जब जिह्वा एक अद्भुत प्रकार की रसानुभूति का आस्वादन करने लगती है। यह अनुभूति अन्ततः हृदय से होती हुई नाभिमण्डल में पहुंचती है। वहां से मेरूदण्ड की जड़ तक जाकर ऊपर की ओर बढ़ती हुई त्रिकुटी में पहुंचती है। उस समय साधक परमानन्द का अनुभव करता है। यही अवस्था समाधि की होती है।

इन्होंने भी बिहार वाले दरिया साहब के समान पूरन ब्रह्म की खोज के लिए घर त्याग कर संन्यासी बनने का उपदेश नहीं दिया है। इनके अनुसार भी वह ब्रह्म मानसिक तथा बौद्धिक चिन्तन से परे है। इनका राम भी कबीर के समान निराकार तथा पर-ब्रह्म का ही स्वरूप है :—

"नमो राम पर ब्रह्म जी,
सतगुरु सन्त अधारि।
जब दरिया बन्दन करैं
पल-पल बारू वारि।"

इनके मतानुसार जिस शरीर के मुख में राम नाम नहीं है वह इस संसार में निस्सन्देह व्यर्थ शरीर है, चाहे बह सोने का ही क्यों न हो तथा चाहे उसमें रत्न ही क्यों न जड़े हों :—

"जो काया कांचनमयी, रत्नों जड़िया चामँ ।
दरिया कहै किस काम का, जो मुख नहीं राम ।"

इन्होंने भी सन्त कबीर के समान उल्टबांसिओं का प्रयोग किया है तथा बिहार वाले दरिया साहब के समान साखियों की रचना की है । इन्होंने भी अपनी बांसिओं के माध्यम से जीवन भर राम नाम तथा आध्यात्मिकता का उपदेश दिया । वस्तुत: यह उस काव्य को आदर्श काव्य मानते ही नहीं जिसमें राम नाम का स्मरण न हो :—

"सकल कवित का अर्थ है सकल बात की बात ।
दरिया सुमिरन राम का, कर लीजै दिन रात ।"

गुरु महिमा पर इन्होंने भी बड़ा बल दिया है । इनके मतानुसार गुरु कृपा बिना साधक कभी अपने पथ पर अग्रसर नहीं हो सकता । यह गुरु को सघन तथा सजल मेघों के समान मानते हैं जो वर्षा करके साधक की हृदय तथा बुद्धि रूपी खेती को हरा भरा कर देते हैं ।

बिहार वाले दरिया साहब के समान इनकी रचनाओं में भी अनुप्रास, विशेषोक्ति, विरोधाभास, रूपक आदि अलंकारों का सुन्दर समन्वय है । इनके द्वारा रचित पदों में कई स्थानों पर सुन्दर प्रतीकों का भी प्रयोग हुआ है जिनसे इनके पदों में उत्कृष्ट कवित्व अभि-व्यंजित होता है ।

इन्होंने भी बिहार वाले दरिया साहब के समान ब्रज, अवधी, फारसी तथा संस्कृत में अपनी रचनाएं की हैं । इनकी अवधी भाषा खड़ी बोली से प्रभावित है । नीचे उद्धृत पद से यह बात स्पष्ट हो जाती है ।—

"बावल कैसे बिखरा जाई ।
यदि मैं पति संग रल खेलूंगी, आप धरम समाई ।
सत गुरु मेरे कृपा कीन्हीं, उत्तम वर पर नाई ।
अब मेरे साई को सरम पड़ेगी, लेगा चरण लगाई ।"

इन्होंने सम्वत् 1815 में इस नश्वर शरीर को त्याग कर ब्रह्म-लोक की ओर प्रस्थान किया था ।

उपर्युक्त विवरण से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि इन दोनों मुसलमान सन्त कवियों ने अपनी पवित्र वाणियों द्वारा जहां आध्यात्मिक विचारों का प्रचार करके समाज के चारित्रिक उत्थान में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया वहां हिन्दी के सन्त साहित्य को अपने अमूल्य रत्न देकर जो उपहार दिया उसके लिए हिन्दी साहित्य इन दोनों सन्त कवियों का चिर ऋणी रहेगा । आज इन सन्त कवियों के अमर साहित्य का मूल्यांकन करने की ओर और अधिक ध्यान देने की नितान्त आवश्यकता है ।

वर्तमान के संदर्भ में इन दो महान मुसलमान सन्त कवियों के साहित्य का मूल्यांकन जहां राष्ट्रीय एकता के हित में अनिवार्य है वहां हिन्दी साहित्य के भण्डार में एक सन्तुलित धर्मनिरपेक्षता के दृष्टिकोण को स्थापित करने में भी सहायक सिद्ध हो सकता है । यद्यपि कुछ विद्वानों ने इन दोनों सन्तों की वाणियों पर कुछ काम किया है, परन्तु फिर भी इस विषय में और भी अधिक अनुसन्धान की आवश्यकता है । ☐